© 2017 IJSRSET | Volume 3 | Issue 5 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099

प्राचीन वैष्णव मत भागवत, सात्वत एवं पांचरात्र

भावना शुक्ला
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

वैष्णव सम्प्रदाय के उपास्य देव भगवान् विष्णु है। इसीलिए इसे वैष्णव सम्प्रदाय कहा जाता है। प्राचीनकाल में वैष्णव धर्म को 'भागवत धर्म', 'सात्वत मत' तथा 'पांचरात्र–मत' की संज्ञा दी जाती थी। ऐश्वर्य, पराक्रम, यश, लक्ष्मी, ज्ञान और वैराग्य इन षड् गुणों के समूह को 'भग' कहते हैं तथा जिसमें भग होता है उसको 'भगवान्' कहा जाता है। षड् ऐश्वर्य से युक्त होने के कारण विष्णु को ही 'भगवत्' की संज्ञा दी जाती है।[1] तथा जो साधक भगवान् विष्णु की भक्ति करते हैं उन्हें ही 'भागवत' कहा जाता है।[2] विष्णु भक्तों के द्वारा पूजनीय होने से इसे 'भागवत धर्म' कहा जाता है। वैष्णव मत को 'पांचरात्र–मत' की संज्ञा क्यों दी जाती है? यह जिज्ञासा का विषय है। इस सन्दर्भ में अनेक मतवाद प्रचलित है। महाभारत के शान्तिपर्व में इस विषय में बताया गया है कि यह नारायण के श्रीमुख से चारों वेद तथा सांख्य–योग के साथ महोपनिषद् के रूप में बताया गया अतः इसका नाम पांचरात्र पड़ा।[3] नारद पांचरात्र में भी प्रतिपादित है कि परमतत्त्व, मुक्ति, भक्ति, योग तथा विषय (संसार) इन पंचविषयों के निरूपण करने के कारण इसे पांचरात्र कहते हैं।[4] पांचरात्र सिद्धान्त बहुत प्राचीन है, जिसका ऋग्वेद के पुरुष–सूक्त से सम्बन्ध है। वह भविष्य के समस्त वैष्णव सम्प्रदायों की नींव हैं। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार– 'परम पुरुष नारायण ने समस्त नरों से परे बनने को एवं सबसे एक होने की इच्छा प्रकट की तब उसको पांचरात्र यज्ञ का दर्शन हुआ तथा जिस यज्ञ का अनुष्ठान कर वो वे अपना ध्येय पा सकें।[5]

रात्र पद 'ज्ञान' का वाचक है। यह ज्ञान पंचविध है, अतः विद्वज्जन इसे पंचरात्र कहते हैं। इनमें से पहला जो ज्ञान है वह जन्म, वृद्धावस्था तथा मृत्यु का नाश करने वाला परमतत्त्व का ज्ञान है। इसे शिवजी ने श्रीकृष्ण से प्राप्त किया था। दूसरा ज्ञान मोक्षार्थियों के लिए अभीष्ट है, यह 'मुक्ति' प्रदान करने वाला परम पवित्रज्ञान है और श्रीकृष्ण के चरणों में लीन करने वाला है। तीसरा शुद्ध एवं मप्रलमय ज्ञान है, जो श्रीकृष्ण जी की भक्ति देने वाला है। यह दास्य ज्ञान भी अभीष्ट है, जिससे मनुष्य श्रीकृष्ण जी के दास्य भाव को प्राप्त होता है। चौथा समस्त सिद्धियों को देने वाला 'परम–यौगिक–ज्ञान' है जो योगियों का सर्वस्व तथा सिद्धों के लिए सुखप्रद है। योगियों की अष्ट सिद्धियाँ हैं– **अणिमालघिमाप्राप्तिः प्राकाम्यं महिमा तथा ईशित्वंच वशित्वंच तथा कामावसायिता।।**[6] अर्थात् अणिमा, लघिमा, महिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, इशित्व, वशित्व तथा कामावसायिता। इसके अतिरिक्त आठ प्रकार की और सिद्धियाँ हैं– सर्वज्ञता, दूरश्रवण, परकायप्रवेश, कायव्यूहन, जीवदान, परजीवहरण, सृष्टिकर्तृत्वशिल्प तथा सृष्टिसंहारकारणत्व। यौगिक ज्ञान से ज्ञानियों को ये षोडश सिद्धियाँ प्राप्त होती है। इनमें से पाँचवाँ है– 'परमज्ञान'

---

1 वेद एवं विभिन्न सम्प्रदाय, डॉ0 चन्द्र प्रकाश सिंह, पृ0 5
2 वेद एवं विभिन्न सम्प्रदाय, डॉ0 चन्द्र प्रकाश सिंह, पृ0 5
3 इदं महोपनिषदं चतुर्वेदसमन्वितम्।
सांख्यं येनाकृतं तेन पंचरात्रानुशब्दितम्।
नारायणमुखोद्गीतं नारदोऽश्रावयत पुनः।।–(महाभारत, शान्तिपर्व–339/11/12)
4 नारद पांचरात्र–1/45/53
5 शतपथ ब्राह्मण–13/6/1ख उद्धृत डॉ0 एस0एन0दास गुप्त, भारतीय दर्शन, भाग–3 पृ0 11
6 नारद पांचरात्र (1/1/49)

जो मनुष्यों का वैषयिक ज्ञान है। जो इष्टदेवी माया है वही मनुष्यों के परम मोह का कारण है। इस ज्ञान से मनुष्य इन्द्रियों के विषयभोग में लिप्त होकर इन्द्रियों का सेवन करता हुआ निरन्तर अपने कुटुम्बियों का और अपना पालन–पोषण करता है। इनमें परमतत्त्व एवं मुक्ति सात्त्विक है। भक्ति सबसे परे अर्थात् त्रिगुणातीत निर्गुण है। 'योग' राजसिक है, भक्त उसे नहीं चाहता है। विषय के तामसिक होने से विद्वान उसे नहीं चाहता है।[7] आचार्य बलदेव उपाध्याय का मत है कि अभिगमन[8], उपादान[9], इज्या[10], स्वाध्याय[11] तथा योग[12] के कारण इसे पांचरात्र मत कहते हैं।

महर्षि पतंजलि का आविर्भावकाल विक्रम पूर्व द्वितीय शतक है तथा उस समय तक भागवत धर्म का उदय सम्पन्न हो चुका था। उस समय विष्णु भक्तों को ही 'भागवत' कहते थे तथा भगवत् शब्द विष्णु के लिए प्रयुक्त होता था। यह सम्प्रदाय इतना लब्ध प्रतिष्ठा हो चुका था कि शिव भक्त भी अपनी विशिष्टता को सूचित करने के लिए भागवत के आगे शिव लगाते थे[13] जैसा कि महाभाष्यकार पतंजलि ने 'अयः शूलदण्डाजिनाभ्यां ठक्ठञौ' (5/2/76) सूत्र के भाष्य में शिवभागवत नामक शैव मत का उल्लेख किया है।[14]

पांचरात्र मत का नामान्तर ही सात्वत मत है। ध्यातव्य है कि लगभग 600ई0पू0 जब ब्राह्मण धर्म में यज्ञीय हिंसा विहित थी तथा उस हिंसा के कारण निर्दोष पशुओं की यज्ञ में बलि देने से वैश्य वर्ग को आर्थिक क्षति पहुँचती थी, अतः इन हिंसा प्रधान यज्ञों के प्रतिक्रिया के फलस्वरूप बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म का प्रादुर्भाव हुआ। उसी समय सात्वतजाति के द्वारा एक उपासना प्रधान सम्प्रदाय विकसित हुआ। इतिहासकारों का मत है कि शूरसेन मण्डल में निवास करने वाली वृष्णिवंशीय क्षत्रिय जाति ही सात्वत कहलाती थी। वैष्णव मत के प्रचार में इस सात्वत क्षत्रिय वंश अथवा यादववंशी क्षत्रिय का विशेष योगदान रहा है। इसी वंश में वैष्णव मत का विशिष्ट प्रचार हुआ था अतः इसे सात्वत मत कहा गया। सात्वत लोग यादववंशी क्षत्रिय थे जिसमें कृष्णचन्द्र का जन्म हुआ था। यह लोग जहाँ गये वहीं अपने मत का प्रचार करते रहे।[15] चूँकि इन्होंने वेदों का विरोध नहीं किया अतः ये जैन एवं बौद्ध धर्म की भाँति प्रसिद्ध नहीं हो पाए। इतिहासकारों के अनुसार– मागध जरासंध के नेतृत्व में प्राच्य नरेशों ने सात्वतों के ऊपर विशाल आक्रमण किया तथा अपनी रक्षा हेतु सात्वत लोग शूरसेन को छोड़कर भारत के पश्चिमी समुद्री तट पर बस गये तथा विदर्भ मैसूरादि सूदुर देशों को अपना उपनिवेश बनाते रहे। वस्तुतः द्रविड़

---

7 रात्रं च ज्ञानवचनं ज्ञानं पंचविधं स्मृतम्। तेनेदं पंचरात्रं च प्रवदन्ति मनीषिणः।।
ज्ञानं परमतत्त्वं च जन्ममृत्युजरापहम्। ततो मृत्युंजयः शम्भुः संप्राप कृष्णवक्त्रतः।।
ज्ञानं द्वितीयं परमं मुमुक्षूणां च वांछितम्। परं मुक्तिप्रदं शुद्धं यतो लीनं हरेः पदे।।
ज्ञानं शुद्धं तृतीयं च मप्रलं कृष्णभक्तिदम्। तद्दास्यदमभीष्टं च यतो दास्यं लभेद्धरेः।।
चतुर्थं यौगिकं ज्ञानं सर्वसिद्धिप्रदं परम्। सर्वस्वं योगिनां पुत्र सिद्धानां च सुखप्रदम्।।
अणिमा लघिमा व्याप्तिः प्राकाम्य महिमा तथा ईशित्वं च वशित्वं च तथा कामावसायिता।।
सावज्ञं दूरश्रवणं परकायप्रवेशनम्। कायव्यूहं जीवदानं परजीवहरं परम्।।
सर्गकर्तृत्वशिल्पं च सर्गसंहारकारणम्। सिद्धं च षोडशविधं ज्ञानिना च यतो भवेत्।।
ज्ञानं च परमं प्रोक्तं तद्वै वैषयिकं नृणाम्। यदिष्टदेवी माया सा परं संमोहकारणम्।।
विषये बद्धचित्तं च सर्वमिन्द्रियसेवनम्। पोषणं स्वकुटुम्बानां स्वात्मनश्च निरन्तरम्।।
प्रथमं सात्विकं च सर्वमिन्द्रियसेवनम्। पोषणं स्वकुटुम्बानां स्वात्मनश्च निरन्तरम्।।
प्रथमं सात्विकं ज्ञानं द्वितीयं च तदेव च। नैर्गुण्यं च तृतीयं च ज्ञानं च सर्वतः परम्।।
चतुर्थं च राजसिकं भक्तस्तन्नाभिवांछति। पंचमं तामसं ज्ञानं विद्धांस्तन्नाभिवांछति।।–
–नारद पांचरात्र/प्रथम रात्रि/प्रथम अध्याय/श्लोक– 44–55

8 मनसा, वाचा, कर्मणा, जप–ध्यान–अर्जन द्वारा श्रीभगवान् के प्रति अभिमुख होना।

9 पूजा के लिए पुष्प, अर्घ्य, नैवेद्यादि सामग्री का संग्रह करना।

10 आगमनशास्त्र के नियमानुसार भगवन् की विधिवत् अर्चना।

11 वैष्णव ग्रन्थों के श्रवण, मनन एवं उपदेश।

12 अष्टांगयोग का अनुष्ठान–आचार्य बलदेव उपाध्याय विरचित 'वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त, पृ0 89

13 वैष्णव सम्प्रदायों साहित्य और सिद्धान्त, आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृ0 65

14 किं योऽयःशूलेनान्विच्छति स आयः शूलिकः। किं चातः–शिवभागवतेऽपि प्राप्नोति। एवं तर्हि उत्तरपदलोपोऽत्र द्रष्टव्यः।–महाभाष्य–5/2/76

15 वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त, आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृ0 70, चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी।

देश में पांचरात्र सम्प्रदाय के प्रचार का कारण सात्वतों का आगमन ही था।[16] डॉ0 कृष्णस्वामी आयंगर के अनुसार– द्रविड देश के अनेक नरेश अपना वंश सम्बन्ध सात्वतवंशीय नरेश कृष्णचन्द्र के साथ जोड़ते हैं। पूर्वोत्तर महीशूर पर राज्य करने वाला तमिल सरदार 'इरून गोवेड़' स्वयं को कृष्ण की 49वीं पीढ़ी का बताता था।[17] उनके अनुसार सात्वत वंशीय क्षत्रियों के साथ सम्बन्ध होने से ही द्रविड़ देश में वैष्णव धर्म का प्राबल्य रहा है। इस प्रकार सात्वतों के अथक प्रयासों के परिणामस्वरूप 'पांचरात्र मत' की उत्पत्ति हुई जो पहले उत्तर भारत में हुई, विशेषतः ब्रह्म मण्डल में तथा उसका प्रचार प्रसार दक्षिण भारत के सुदूर दक्षिण प्रान्त द्रविड़ देश में हुआ। इससे यह सिद्ध होता है कि पश्चिमी विद्वानों का यह मत कि ईसाई भक्तों के सम्पर्क में दशम शतक के आस–पास दक्षिण भारत में भक्ति की उत्पत्ति हुई है, सर्वथा असत्य सिद्ध होता है।[18]

ऐतरेय ब्राह्मण तथा शतपथब्राह्मण में सात्वतों के नाम का उल्लेख किया गया है। ऐतरेय ब्राह्मण के ऐन्द्रमहाभिषेक के प्रसंग में सात्वतों का निवास दक्षिण भारत बताया गया है, जहाँ ये इन्द्र भोज के नाम से अभिषिक्त किये गये थे।[19] ऐतरेय ब्राह्मण का रचनाकाल ईसा पूर्व दशम् शतक के आस–पास माना जाता है। इससे यह सिद्ध होता है कि सात्वत मत ईसा पूर्व दशम् शतक तक स्थापित हो चुका था।[20] पाणिनि की अष्टाध्यायी में 'वासुदेवार्जुनाभ्यां वुन्'[21] सूत्र से वासुदेव की भक्ति करने वाले के अर्थ में 'वुन्' प्रत्यय का विधान किया है। महाभाष्यकार पतंजलि ने वासुदेव शब्द का अभिप्राय परमेश्वर बताया है। यादववंशी क्षत्रियकुल में उत्पन्न वासुदेव के पुत्र कृष्णचन्द्र से नहीं। इससे ज्ञात होता है कि यह उनसे भी प्राचीन है। भागवत सम्प्रदाय के उपास्य देव 'वासुदेव' का नाम पाणिनि के पूर्व वैदिक साहित्य में भी आया है। तैत्तिरीय आरण्यक में भी कहा गया है–

नारायणाय विद्महे, वासुदेवाय धीमहि।
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।।

प्रस्तुत विष्णु गायत्री में स्पष्ट रूप से विष्णु भगवान् की एकता नारायण तथा वासुदेव से की गई है।[22]

नानाघाट के गुहाभिलेख (प्रथम शतक ईसा पूर्व) के मप्रल श्लोक में अन्य देवताओं के साथ संकर्षण तथा वासुदेव का नामोल्लेख भी किया है। घोसूण्डी (चित्तौरगढ़ के समीप नगरी के पास) के वैष्णव शिलालेख से ज्ञात होता है कि सर्वमेध यज्ञकर्ता पाराशरी पुत्र राजा सर्वतात ने भगवान् संकर्षण तथा वासुदेव के उपासना मन्दिर 'पूजाशिलाप्राकार' का निर्माण करवाया था।[23] चूँकि ये राजा कण्ववंशी था, अतः इसका समय ईसवी पूर्व प्रथम शतक से पूर्व नहीं हो सकता है।

वैष्णव आचार्यों की सम्मति में पांचरात्र का सम्बन्ध वेद की एकायन शाखा से है। भगवान् के पाँच आयुधों के अंशरूप ऋषियों–शाण्डिल्य, औपगायन, मौंजायन, कौशिक तथा भारद्वाज ने मिलकर विष्णु की आराधना की इच्छा से तोताद्रि पर्वत के ऊपर कठिन तपस्या की। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर जगत्पति भगवान् वासुदेव ने 'एकायन वेद' का रहस्य उन्हें समझाया। इनके द्वारा तन्त्र का उपदेश एक रात्रि में न देकर मुनियों के संख्या के अनुसार पाँच रात्रियों में दिया गया, अतः इसे 'पांचरात्र' कहते हैं।[24] एकायन का अभिप्राय हैं– 'एकमात्र अयन अर्थात् मार्ग अर्थात् मोक्षप्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ साधन।[25]

---

16 वैष्णव, सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त, आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृ0 70, चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी।

17 एस0के0 आयप्रर, परम संहिता (परिचय, पृ0 15–17), ळण्ळैण छवण 86ए 1940ए द्रष्टव्य– आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृ0 71

18 डा0 चन्द्र प्रकाश सिंह, वेद एवं विभिन्न सम्प्रदाय, पृ0 6, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली

19 एतस्यां दक्षिणस्यां दिशि ये के च सात्त्वतां राजानो भौज्यायैव ते अभिषिच्यन्ते। भोजेति एनान् अभिषिक्तानाचक्षते।।–ऐतरेय ब्राह्मण– 8/3/14

20 आचार्य बलदेव उपाध्याय, 'वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त', चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी, पृ0 71

21 पाणिनि अष्टाध्यायी–4/3/98

22 उद्धृत आचार्य बलदेव उपाध्याय विरचित 'वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त', चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी।

23 आचार्य बलदेव उपाध्याय, 'वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त', चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी, पृ0 65

24 आचार्य बलदेव उपाध्याय विरचित 'वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त, चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी, पृ0 76

25 पंचायुधांशास्ते पंच शाण्डिल्यश्चौपगायनः।
मौंज्यायनः कौशिकश्च भारद्वाजश्च योगिनः।।

शंकराचार्य एकायन का अभिप्राय 'नीतिशास्त्र' से तथा रंगरामानुज के अनुसार एकायन भी 'वेद की एक शाखा' है। नागेशभट्ट एकायन को शुक्ल यजुर्वेदीय काण्व शाखा का मानते हैं।[26] सर्वप्रथम पांचरात्र शब्द शतपथ ब्राह्मण[27] में मिलता है। उसमें पांचरात्र सत्र का वर्णन मिलता है, जिसे नारायण से समस्त प्राणियों के ऊपर अधिपत्य प्राप्त करने हेतु किया था। महाभारत के नारायणीयोपाख्यान से ज्ञात होता है कि पांचरात्र–आचार 'वैदिक–आचार' के ऊपर आश्रित है। महाभारत के अनुसार चित्रशिखण्डी नाम सात ऋषियों ने वेदों का निष्कर्ष निकालकर 'पांचरात्र' का प्रणयन किया। इसमें 'पुरुषार्थचतुष्टय' तथा 'प्रवृत्ति एवं निवृत्ति' दोनों मार्गों की सत्ता बताई गयी है। इसमें यज्ञीयहिंसा निषिद्ध थी। पांचरात्र मत के राजा उपरिचरवसु ने स्वयं वैदिक यज्ञ में पशु के स्थान पर तिल–यव की बलि दी। पांचरात्रमत में चतुर्व्युह का सिद्धान्त विशिष्ट माना जाता है। इन चारों व्यूहों का नामकरण यादववंशी महनीय पुरुषों के नाम पर किया गया है जो क्रमशः है– (1) वासुदेव (कृष्ण) (2) संकर्षण (उनके ज्येष्ठ भ्राता) (3) प्रद्युम्न (पुत्र) तथा (4) अनिरूद्ध (पौत्र)।[28] पांचरात्र मत में वासुदेव नामक प्रथम व्यूह से संकर्षण नामक व्यूह की उत्पत्ति होती है जो सभी जीवों के अधिपति हैं। वासुदेव परमात्मा का नामान्तर है तथा संकर्षण जीवात्मा का नामान्तर है। संकर्षण से उत्पन्न होता है– 'प्रद्युम्न' अर्थात् जो मन हैं। तथा प्रद्युम्न से 'अनिरूद्ध' अर्थात् अहंकार की उत्पत्ति होती है। अनिरूद्ध से 'ब्रह्मा' की उत्पत्ति हुई जिससे ये सारी सृष्टि उत्पन्न हुई। फिर प्रलय के पश्चात् पुनः इसी क्रम से वासुदेव क्रमपूर्वक संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरूद्ध पैदा होते हैं।[29] इससे यह सिद्ध होता है कि परमात्मा से जीवात्मा की उत्पत्ति होती है।

शैशुनाग तथा मौर्यवंशी राजाओं के पतन के अनन्तर शुंगवंशी राजवंश न सिर्फ ब्राह्मण था, अपितु वह वैष्णव धर्म का परम उन्नायक था। इसी वंश के राज्यकाल में मध्यभारत एवं पश्चिम भारत में वैष्णव धर्म का अभ्युदय हुआ। बेसनगर (भिलसा) में गरुड़स्तम्भ का संस्थापक यूनानी राजदूत हेलियोडोरस परमभागवत था। ईसवी सन् का चतुर्थ एवं पंचम शतक वैष्णव धर्म का स्वर्णयुग माना जाता है क्योंकि इसी समय परमभागवत गुप्तवंशी राजाओं ने वैष्णव धर्म को राष्ट्र धर्म बनाया। वैष्णव धर्म के परम उन्नायक होने के कारण उन्होंने 'परम भागवत' की उपाधि धारण की। इसी युग में अहिर्बुध्न्य संहिता, परमसंहिता, सात्वतसंहिता आदि पांचरात्र संहिताओं का भी प्रणयन हुआ।[30]

भागवत धर्म का सर्वाधिक वर्णन पुराणों में प्राप्त होता है। विष्णु के चार अवतारों के आधार पर मत्स्य, कूर्म, वाराह एवं वामन पुराण का नामकरण किया गया है। इसके अतिरिक्त नारद, ब्रह्मवैवर्त, विष्णु, पद्म एवं श्रीमद्भागवत महापुराण इन पंच पुराणों में भगवान् विष्णु के आध्यात्मिक स्वरूप एवं माहात्म्य का वर्णन प्राप्त होता है।[31]

पंचापि पृथगेकैकदिवारात्रं जगत्प्रभुः।
अध्यापयामास यतस्तदेतन्मुनिपुप्रवाः।।
शास्त्रं सर्वजनैर्लोके पंचरात्रमितीर्यते।।–ईश्वर संहिता, अं0–21, उद्धृत– वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त, पृ0 73

26 डा0 चन्द्र प्रकाश सिंह, वेद एवं विभिन्न सम्प्रदाय, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, पृ0 65

27 शतपथ ब्राह्मण–13/6/1

28 आचार्य बलदेव उपाध्याय विरचित वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त, पृ0 74

29 आचार्य बलदेव उपाध्याय विरचित वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त, पृ0 65

30 आचार्य बलदेव उपाध्याय विरचित, वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त, पृ0 65

31 डॉ0 चन्द्र प्रकाश सिंह विरचित वेद एवं विभिन्न सम्प्रदाय, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, पृ0 7